८०१७

यज्ञाङ्ग प्रकाश

गूलर गुण विस्तार

मूल्य ।।।)

लेखक

पं० श्रीचन्द्रशेखरधर मिश्र

श्रीः

उपोद् घात

भूमिका

अब तक इस धरती पर गूलर के पत्ते वा उदुम्बर-सार के समान अचूक औषध का आविष्कार नहीं हुआ है। और यह एक ही औषध जो अनेक रोगों में अद्वितीय लाभ करता है जैसा कि उस रोग की खास दवा भी काम नहीं करती है यह इस की विचित्रता पर भी विचित्रता है। छुरी आदि से कट जाने में पेड़ आदि पर से गिर जाने में, आग से जल जाने में, चाट लग जाने में, फोड़े, सेत आदि में मरणोन्मुख रोगियों का यही जान बचाता है।

यदि यह औषध न होता, कितने, आग से जल जाने वाले कितने रंग बिरंगे चाट वाले, कितने घाव वाले, कितने शूल वाले अब तक नये जन्म धारण कर लिये होते थोड़े ही दिन होते हैं कि 'मझौली' के राजा साहब प्रयाग में आग से जल जाने के कारण ही बैकुण्ठ बासी हो कर अपने आश्रितों के ही रुलाने के कारण न हुये, राजा महोदय के देह से कोई उत्तराधिकारी पुरुष न रहने से राज्य के शुभ चिन्तकों को भी कष्ट हुए। एक मात्र सन्तान के जल जाने से 'रियासत' डुमरिया (चम्पारन) भी शोकाक्रान्त रही।

यदि उदुम्बर सार का आविष्कार हुआ रहता तो उक्त भयङ्कर आपत्ति वा दुर्घटना नहीं होती।

इस पुस्तक के पढ़ जाने में जो आप श्रम करें तो अवश्य ऊपर की बातें साफ मालूम हो जायेंगी। और भयङ्कर समय में (आफत में) अनेक प्रकार से अपने वा परिवार के प्राण बचा कर प्रसन्न होंगे।

इस पुस्तक को मैंने संस्कृत श्लोक में लिखा है। उसका पद्य मय हिन्दी में भी प्रायः अनुवाद है (उर्दू, बंगला, अंग्रेजी आदि में

प्रकाशित होगा) कोई बात संस्कृत में विशेष है तो कोई बात हिन्दी के पक्ष में। और सब से विशेष इसमें हिन्दी में व्याख्या है। पाठकों के पूर्ण समझने के लिये मैंने नमूने की भांति कहीं कहीं उन दुखार्-न्तों का वर्णन भी कर दिया है। जिनमें गूलर के व्यवहार से बहुतों की जान बची है।

मेरी इस लोक सेवा को समझदारों को तो अवश्य देखने की कृपा करनी ही चाहिये, परन्तु जो लोग रत्ती भर भी समझ रखते हों और अपने प्राण बचने वा बचाने का आनन्द लेना चाहते हों तो अवश्य इसे पढ़ जायें।

अब धार्मिक, लोक हितैषी, महानुभावों से मेरी सविनय, साञ्जलि सहस्रशः सादर प्रार्थना है कि मेरी त्रुटियों पर ध्यान न देकर, जो कुछ मुझसे आज तक जांच वा आविष्कार की सेवा बन पड़ा है, उन पर सच्चे हृदय से जी खोल कर आशीर्वाद देवें। कि यह जांच की प्रणाली सदा स्थिर रूप से काम देती रहे।

(१) और सर्पविष महौषध "चन्द्रसुधा"

(२) पागल सियार कुत्ते आदि का महौषध 'श्वापद्विष महौषध'

(३) जलोदरादि जटिल रोगों की "सिद्ध महौषध"

(४) औषधियों (जड़ी बूटी, उद्भिद आदिकों से) 'सारोद्धार' आदि के आविष्कार से जनता का पूर्ण उपकार होवे।

विनीत

श्रीचन्द्रशेखरधर शर्मा

श्रीः

श्रीगणपतयेनमस्तुभ्यम्

यज्ञाङ्गप्रकाश

वा

गूलर चान्द्ररससार

सत्पत्रोल्लसित हरिच्छविर्जनानाम्
पीडाधाः प्रशमन भूरसु सेविनांयः
सन्तप्तक्षति हरणः फलप्रदाना
यज्ञाङ्गो जयति तेमान्तमानतोऽस्मि ॥१॥

(हिन्दी पद्यानुवाद)

उल्लसित हैं सत्पत्र से लक्ष्मी जहां शुभ धाम हैं।
दुर्गति जनों के कठिन दुख हर पा रहे जो नाम हैं॥
परिताप क्षति को हर सुफल का दान जिनका काम है।
यज्ञाङ्ग जग में जय करें, उनको अनन्त प्रणाम है।

यहां विष्णु भगवान के पक्ष में यह अर्थ है। अच्छे पत्र (वाहन) गरुण से जिसकी हरित (हरे) अङ्ग की शोभा उल्लसित है। और सेवा करने वालों की पीड़ाओं को जो शान्त करते हैं (त्रिविध तापादि से) सन्तप्त लोगों की क्षति (हानि) के हरण करने वाले फलप्रदाता यज्ञाङ्ग (विष्णु भगवान वा वाराह अवतार) भगवान (का) जय जय कार है, और उन्हें मैं प्रणाम करता हूं।

दूसरा अर्थ यह है—कि अङ्ग जिसका ऐसा धर्म अथवा यज्ञ का अङ्ग हर्ष वा संगम, अथवा यज्ञ का अंग (सामान) अतिशय जय को प्राप्त हो रहा है। जिन्हें मैं नमस्कार करता हूं, और जिसकी सत्पत्र

(अर्थात तुलसी पत्र) बिल्व पत्र अथवा कपित्थादि के पत्र से हरे रङ्ग की या हरित (दिशाओं) में उल्लसित छवि है। जो सुसेवीजनों की पीड़ा को प्रशमित करते हैं। और संतप्त लोगों की क्षति (हानि) का हरण करते हैं तथा सबको करमों का उचित फल देते हैं।

पञ्चमी/ ~~तीसरा~~ अर्थ यज्ञाङ्ग गूलर का नाम है। अच्छे पत्रों से जिसकी दिशाओं में शोभा उल्लासित है। और सेवन (व्यवहार) करने वालों की पीड़ा को जो शान्ति करते हैं, और जो लोग रोगादिकों से सन्तप्त हैं, उनकी क्षति (हानि या घाव) व्रण आदि का जो हरण करने वाले हैं और जो फल प्रदाता है। औषध का गुण देने वाले या भोजनादि के लिये लाभकारी फल के दाता है। ऐसे यज्ञाङ्ग (गूलर वृक्ष) ने संसार में जय प्राप्त किया जिसे मैं प्रणाम करता हूँ।

यज्ञाङ्गो जयति तराम् प्रभवति यत्सेवना न्नितराम्।
उपताप रुजो प्रशमः उपकृति रतुलाहि लोका नाम् ।२।

गुणायेऽस्यावधिर्भुवि यज्ञाङ्गस्या प्रकाशिताः।
आविष्करोमि कृपया यज्ञाङ्गस्यैव भूरिशः॥३॥

एतावन्तो नहि गुणाः यज्ञाङ्गस्य विपश्चितः।
समये समये शेषान् करिष्यन्ति प्रकाशितान् ॥४॥

जग में उस यज्ञाङ्ग का, होवे जय जय कार।
ताप यातना हर करैं, जो जन का उपकार ॥ २ ॥

जो अबलों यज्ञाङ्ग के, छिपे गुणादि विकाश।
कुछ पाकर उनकी कृपा, करता आज प्रकाश ॥ ३ ॥

इतने ही गुण हैं नहीं, गुण हैं और अपार।
प्रथित करैंगे विज्ञजन, समय समय विस्तार ॥ ४ ॥

संसार में यज्ञाङ्ग (गूलर आदि) का विजय है जिनके सेवन से अनेक प्रकार के उपताप और पीड़ा रोग आदि का उपशम होता है और संसार का अद्वितीय उपकार भी होता है। २ ॥

मैं ईश्वर की कृपा से संसार में अब तक जो गूलर के गुण अप्रकाशित थे, आविष्कृत (प्रकाशित) करता हूं । ३ ॥

गूलर के जितने गुण प्रकाशित किये जाते हैं इतने ही नहीं हैं, समय समय पर विद्वान लोग इसके विशेष गुण को जांच कर प्रकाशित करेंगे । ४ ॥

सदा या फलदा सिद्धा, चिरादनुभवैर्निजैः
प्राणत्राणार्थमार्तानाम्, चिकित्सा न तिरस्कृता ।५।
अतएव नवीनानामौषधानामपरीक्षणे
दुर्घटत्वमुपायातं तथाप्यस्मिन् ममोद्यमे ॥ ६ ॥
विज्ञाःश्रमज्ञाः कृतिनः प्रसीदन्तु दयालवः ॥

रोगी जैसी रीति से, हुए सदा आराम ।
कभी उसे छोड़ी नहीं, उनके हित के काम ॥ ५ ॥
और नवौषध जांच के, विविध कठिन सामान ।
सब विज्ञों पर है प्रकट, दुर्घटत्व का ज्ञान ॥ ६ ॥
साहस कर ऐसे समय, किया जांच का काम ।
करें दया इस पर सदा, सब सज्जन गुणधाम ॥

बहुत दिनों के मेरे अनुभव से जो चिकित्सा मुझे सिद्ध फल देख पड़ी है, रोगार्तों (बीमारों) के प्राण त्राण के लिये उस चिकित्सा प्रणाली को मैंने नहीं छोड़ी है × अतएव नवीन औषधों की परीक्षा में दुर्घटता उपस्थित हो गई, तथापि इन कठिनाइयों के रहते भी नवीन औषधों के गुणाविष्कारक कठिन समुद्यम जो मैं कर रहा हूं।

इस पर श्रम समझने वाले, कुशल, दयालु सज्जन अनुग्रह कर प्रसन्न हों ५ । ६ ॥

यूरोपीय नवीन आविष्कारक "पास्चुर" आदि कि प्रति दिन जीते ही जी सैकड़ों पशुओं के सारे शरीर की खाल खैंच लिया करते थे और सम्भव है कि ऐसा कार्य क्रम इस समय भी जारी हो ।

और और भी उन लोगों के आविष्कार कार्य में जितनी ही अधिक उन्हें सुलभता रही है वा है । उतनी ही अधिक मुझे कठिनता भी है ।

कुसमये रचितन्नपरीक्षितम्
किमपि नो वितथञ्च समीरितम्
शिवदयोल्लसितञ्च ततोऽञ्चितम्
शिवकरं जगतामिति निश्चितम् ॥७॥

क्षतोद्भवा वा क्षतजादि जाश्च
संक्रामकाश्चोदरजास्त्वगुत्थाः
परीक्ष्यतां केऽत्र शमम्प्रयान्ति
सारेण नोदुम्बरजेन रोगाः ॥८॥

दुस्समय में न इसे रचा, फिर भी परीक्षा की नहीं।
कुछ भी असत्य नहीं लिखा है, काव्य रीति बिना कहीं॥
इससे सुखद होगा शुभद, यह सकल विधि संसार का।
ईश्वर दया से सब विजय होगा उदुम्बर सार का ॥ ७ ॥

छूत से जो रोग है चमड़े के जितने रोग हैं।
घाव जितने हैं, दरद जितने कठिन दुख भोग हैं॥
पेड़ से गिर, पेट के फिर, धातु के, कटने के कष्ट।
जांचिये जो इस दवा से क्या नहीं होते हैं नष्ट ॥८॥

यह पुस्तक कुसाइत में नहीं रचा गया और न गूलर की भिन्न २ रोगों में कुसमय में परिक्षा ही की गई है, अर्थात ज्योतिष शास्त्रानुशार यह अच्छे मुहूर्त ही में पुस्तक भी लिखा गया और परीक्षा भी की गई इसी भांति काव्य की रिति को छोड़ कर कोई बात असत्य नहीं लिखी गई है और ईश्वर के पूर्ण अनुग्रह से यह अति श्रेष्ट कार्य हुआ है इस लिये यह पुस्तक या इसमें के योग संसार के कल्याणके लिये समर्थ होगा यह निश्चय है। ७।

क्षत (कट जाने) से जितने रोग होते हैं (घाव आदि) और लोहू आदिक धातुओं से जो रोग उत्पन्न होते हैं और संक्रामक (छूत जर्म आदि से) से जो रोग होते हैं (विशेष कर चाम में जो रोग उत्पन्न होते हैं, आप परीक्षा कर देखिये कि उदुम्बर पत्र क्षार से कौन रोग शान्ति नहीं होते। ८।

शोथोत्थव्रणे ग्रन्थिसमुद्भवे वा,
व्रणेऽपि शस्त्रादि विशोधितेपि ।
अनन्य साधारण रोपणत्वात्,
विराजते राजवदेष चान्द्रः ॥९॥

येगद निग्रह कर्माणि, औदुम्बर पत्रजा गुणास्सन्ति
तेऽष्टादशगुणगुणिता विलसन्तिहिं 'चान्द्र'रससारे।१०।

आज तक इस जगत में, ऐसी दवा निकली नहीं ॥
देख पड़ता है न गुण दशमांश भी इसका कहीं
फेल है कोकैन जहां बेकार कार्बोलिक जहां।
प्राण रोगी का बचाता है जबर्दस्ती वहां ॥
आइडो फारम भी हो जाता जहां फिर फेल है।
इस मुसीबत में दिखाता यह खुदाई खेल है ॥
एक हफ्ते में दवा से घाव भरता है जहां।
एक ही दिन में दिखाता काम जादू का वहां ॥ ९ ॥
गूलर के जो पत्र गद करते हैं आराम
उनसे अट्ठारह गुना, बढा सारका काम ॥ १० ॥

शोथ बढकर जो व्रण हो (उसके आरम्भ ही में) और ग्रन्थि बाई (जहर बाद) से जो व्रण होते हैं और शस्त्रादि से शुद्ध किए हुए व्रण में (जिससे कि पीब मवाद आदि निकाल लिए गए हों) इनकी विविध अवस्थाओं में यह उदुम्बर पत्र रस [1] 'चान्द्ररस सार' अपने अनन्य साधारण (अद्वितीय) रोपण (घाव के भरने) के कारण श्रेष्ठ राजा के समान विराजित है ॥ ९ ॥

१ मेरे मित्र चिकित्सक कुल भूषण पं० वृजविहारी चतुर्वेदीय तथा भिषग भूषण श्रीदय मनारायण शर्मा पटना निवासियों ने यह कहा कि आप इन नवीन प्रणाली के आविष्कर्ता हैं अतः केवल सार नाम नहीं रख कर आप के नाम के साथ "चान्द्ररससार" नाम हो" यही रख कर लिखाया। किन्तु कहीं संक्षेप की दृष्टि से चान्द्र का सार ही लिख दिये हैं।

बीमारो के आराम करने में जितने गुण गूलर के पत्तों में है वै अट्ठारह गुण अधिक गूलर के 'चान्द्ररससार' में है ॥ १० ॥

(सारे विशिष्टो दोषः कल्के विशिष्टो गुणश्च)

दोषोऽयम् प्रायशः ससारे स्वल्पोदाहो व्रणेभवेत्
सारादुगुणोऽयं कल्कस्य सद्यः शीतलकारिता ।११।

व्यवहृतिः

चान्द्रश्चतुर्गुणजले, तरलो वस्त्रे संप्लुतः
स्थाप्यो व्रणादिस्थानेषु यथा शुष्येत् कदापिन ।१२।

हैगूलर के सार में दोष जलन का अल्प *
गुण यह भारी कल्क में, शीतल भाव अनल्प ॥ ११ ॥

व्यवहार विधि

जल दुगुने या चौगुने, में घोरो यह सार
दो पट्टी व्रण आदि पर, तब देखो उपकार ॥ १२ ॥

इस नव 'चान्द्ररससार' में अब तक थोड़ा सा दोष है कि तीक्ष्णता के कारण व्रण में बहुत कम (एकाध मिनट तक मरिच के जलन से दस मांस कम) जलन होती है जिसके छुड़ाने का कुछ यत्न हो रहा है और एक दूसरे प्रकार का बिना जलन का सार भी तैयार होगया है। पर दूसरे रूप का हुआ है।

और पत्र के कल्क में यह 'चान्द्ररससार' से प्रधान विशेषता है कि यह सद्यः शीतलता लाता है। (११)

---

*तुरंत कटी हुई जगह पर कभी ही कभी बहुत ही थोड़ी जलन १-२ मिन्ट ही तक होती है। और दवाओं से कम ही होती है आग के जलन पर तो तुरन्त ही इससे शीतलता फैलती है।

व्यवहार विधि

इस 'चान्द्ररससार' को चौगुने पानी में ढीला कर लेना यदि तुरन्त ही का कटा हुआ घाव हो तो उसके भीतर बिना ढीला किया हुआ ही 'सार' भर दो। ऊपर से एकहरी दुहरी या चार परत कपडे को पट्टी को चौगुने वा अठगुने, दसगुने जल में घुले औषध में डुबो कर धर देना। और एक और कपड़े से बांध देना कि वह पट्टा गिरने न पावे। इस पर पूरा ख्याल रहे कि यह पट्टी कम से कम २४ घन्टे बराबर औषधों के जल से गीली रहे यदि औषध का जल न मिले तो पानी से भिगोना ॥ १२ ॥

तथैवौदुम्बरं कल्कमत्र जञ्चापि धारयेत्
आर्द्रो यथास्यात् कल्कस्य सजलेन निरन्तरम् ॥१३॥
अहोरात्रिप्रयोगेण पश्याश्चर्य चमत्कृतिम् ॥१४॥

(क्वचिल्लेप व्यवहार दोष तो लाभाभावः)

अन्तःपूये व्रणादौच शल्यादि सहितेपिवा ।
रोगान्तर बलाधिक्ये सान्तरेवा प्रलेपने ॥ १५ ॥

पत्रादिक को पीस कर, करलो खूब महीन।
व्रण आदिक पर वह धरो, सूखे जो कि कभीन ॥

लेप करो मोटा सदा, सूखै तो जल और।
देकर फिर गीला करो सूखै किसी न ठौर ॥

फिर छन २ पर देखिए, इसका गुण बिस्तार।
किस प्रकार दुख सिन्धु से, करता बेड़ा पार ॥

पीब भरी भई घाव में फेल है फेल बराबर जो न लगावे।
फेल है सूख गई है दवा जहां फेल जो लेप पतोला चढावे ॥
फेल है भारी परिश्रम जो करै फेल है जो बदफेल में धावे।
खेल है कष्ट सदा नियमी को वही हँसो खेल में रोग नसावे ॥

१३—१४—१५

इसी प्रकार 'चान्द्ररस सार' न मिल सके तो थोड़े जल के साथ गूलर के पत्तों को महीन पीस कर एक एक अंगुल या आधे अंगुल की मुटाई में छाप देना। घाव हो तो भीतर भी भर देना और इसी पिसी हुई गूलर के पत्र रस से घाव भिगाते रहना चाहिये। भिगोने से अधिक गुण होता है। और औषध का बल भीतर प्रवेश करता है। २४ घंटे ही में इसको आश्चर्य सफलता दिखलाती है।१३-१४

कई एक नीचे लिखे हुए प्रकारसे व्यवहार (इस्तेमाल में) दोष रह जाने से बहुधा दवा यह बेकार हो जाती है। जैसे घाव के आरम्भमें यदि पूरी पीब भरी हुई है ऐसी हालत में पीब निकालता है। मगर देरमें फायदा करता है। ऐसा हालत में तीसी के भूने हुए चूर्ण में थोड़ासा सार मिला कर चारों ओर से (मुह छोड़ कर) गर्म २ लगाना चाहिए तीसी (अलसी) नहीं मिलने पर इसी को गर्म करके लगाना चाहिए। १३ १४

और जिस घाव में गोली, छर्रा, कील काटे, शीशा आदि का टुकड़ा लकड़ी की चूनी आदि भीतर रह जाय, इन सबको बिना निकाले हुए सब घाव को नहीं लाभ करेगा हां दरद और बेचैनी आदि के लिए इस्तेमाल करें। कुछ फायदा सम्भव है।

और रोग के अधिक बल रहने पर जैसे सिफलस (गर्मी) कोढ आदि के बल अधिक रहने पर (सारे शरीर में बिषाक्त रुधिर होने से एक जगह घाव में लगाने से) लाभ कम सम्भव है भीतर रक्त परिश्कारक (मुसफ्फी खून आदि) दवाइयां देकर तब इसका इस्तेमाल करना चाहिए।

जिस घाव आदि में निरंतर लेप नहीं किया जाता अथवा दवा सूख जाती है ऐसी हालतमें रोगाणु बढ जाते हैं इस कारण घावमें लाभ नहीं होता। १५।

स्वल्पे प्रलेपेऽप्यथवा शुष्के वापि विलेपने
परिश्रमादावधिके प्रायोऽयमफलोविधिः ॥१६॥*

---

* १६ वा श्लोक का अर्थ आगे लिखा गया अब यहां कोई जरुरत नहीं।

पत्ररसोऽस्य पलार्द्धः प्रमेह हारी भवतिसद्यः
विद्धाद्धि रसप कृत्यं, परीक्षतां रक्तपित्तेपि ॥ १७ ॥

यक्ष्माणि चतुर चिकित्सा साहितं सुहितं सर्वोहितम्भवति
यकृति विकृतितामासे, हृद्रोगेच ग्रहणयाञ्च ॥ १८ ॥

देख दोष को दो स्वरस दो तोला परमान ।
रक्तपित्त यक्ष्मा प्रदर यकृत मेह पहिचान ॥
हृदयरोग ग्रहणी विकृति फिर रक्तातीसार ।
देहदार मन्दाग्नि का करता है प्रतिकार ॥ १७-१८

गूलर के पत्तों का रस दो रुपया भर शाम सुबह थोड़ो सहत देकर पीयें और पथ्य से रहें तो प्रमेह छूटता है ।

रक्तपित्त (मुंह आदि से खून आना) को भी वह दूर करता है इसमें एक एक पहर पर उक्त मात्रामें सेवन करने पर अधिक उपकार होता है । पर याद रहे कि रक्त पित्त पर जो पथ्य है । उसी के अनुसार रहना चाहिए । यक्ष्मा में भी रक्त आना, रक्त निष्ठीवन, अधिक दस्त का आना अन्ननाली में कष्ट से अन्न का जाना मुखपाक (निनाव) आदि आदि आराम होते हैं । मूल रोगमेंभी (यक्ष्मामें) आराम होता है । तथा अन्याय 'सर्वाङ्ग सुन्दर' मकरध्वजवटी महा मकरध्वजरस, मृगांकरस सुवर्णवंग, मत्स्याद्यो योग आदि के सहित अतीवो उपकारी होता है ।

यकृत के विकार में अम्लपित्त में हृद्रोग में महापुनर्नवादिवटी अर्जुनादि चूर्ण सहित परमोपकारी होता है ।

ग्रहणी रोग में भीपथ्य से इसका सेवन करना । सम्भव हो तो गूलर का कच्चा फल भी उसिन कर खाना, तरकारी या मोदक बना कर या मुरब्बे की रीति पर तैयार कर खाना तथा रक्तातीसार में अतीव उपकारी है ।

देह जल जाय तो यथा नियम "सार" लगाना अथवा पत्ते पीस कर छापना और देह में दाह (जलन) हो वहां भी इसका लेप उप

कारी है, तथा रक्तातीसार और ग्रहणी के समान ही मंदाग्नि में भी उपकारक है ॥ १८ ॥

भक्षिते प्रदर मेह हारकः थः फिरंग गद दूषितेऽपिच
नाडिका व्रण हरोऽपि सक्काचित्
पश्यचास्य बहुशश्चमत्कृतीः ॥ १९ ॥

द्विरक्तिमान मारभ्य यावद्विंशतिरक्तिकम्
दोषादि बलमालोक्य चान्द्रे मात्रा प्रकल्पयेत् ॥२०॥

किञ्चिन्न्यूनाधिके दोषो मात्रायानैव विद्यते ॥ २१ ॥

याके भोजन से छुटै, प्रदर प्रमेह फिरङ्ग
सैन आदि के घाव में, अजब दिखावे रङ्ग ॥ १९ ॥

दो रत्ती से बीस तक सरल सार का मान
दोष देख कर लीजिये मात्रा का अनुमान ॥ २० ॥

न्यून अधिक के दोष से, नहिं करता अपकार
रोग दोष को देख कर, सेवन करिये "सार" ॥ २१ ॥

प्रदर प्रमेह आदि इसके भोजन से छूटते हैं फिरंग से उत्पन्न (सिफ़लिस) नाडी व्रण (सैन) भी कई एक आराम हुए हैं।

इसी प्रकार इसके अनेक प्रकार के चमत्कार देखिये ॥ १९ ॥

चान्द्ररससार

रोगादि के बलानुसार २ रत्ती से २० रत्ती तक इस की मात्रा ठीक करके और चूंकि यह विष नहीं है अतः दिन में इसका कई बार सेवन हो सक्ता है। २०। २१।

येप्रासादा त्वृक्षतोवा पतन्ति,
विद्धाभिन्नायेक्षतावापिपिष्टाः
शस्त्रैः शल्यै र्वापि पश्वादि भिर्वा,
तेषामेषप्राण संत्राणहेतुः ॥ २२ ॥

व्रणेपि नाडी व्रणजे विकारे,
पामासुद द्रौच विचर्चिकायाम्
अर्द्धाङ्ग जाध्यान्व्रण मालिकायां,
पीड़ा धिकाया मपि पीडिकायाम् ॥२३॥
सर्वास्व वस्थासु कृतोपकार,
सार स्तथा न्यौषध जीनसार:

पेड़ से गिर पेट के फिर, धातु के कटने के कष्ट।
जानिये जो इस दवा से क्या नहीं होते हैं नष्ट॥
पेड़ से जो गिर हुआ बेहोश सबको सोच है।
फट गया है खून जारी है पिसा है मोच है॥
इस कड़ी आफत में रोगी को बचाता है यही
जो तड़प कर रो रहा उसको हसाता है यही॥
यदि पशु तुरगों ने, टाप को चोट मारी।
मह उखड़ गये हैं, घाव है घोर भारी॥
यदि सब बदनों से, खून को धार जारी।
इस असमय में भी, हैं यही त्राण कारी॥ २२॥

अर्द्धांग में व्रण मालिका होती अधेड़ी नाम की।
उसके लिये भी यह दवा सबसे बढ़ी आराम की॥
यह खाज दाद विवाय में भी है बड़े ही काम की।
फिर आंख उठने में दिखाती यह दवा श्री राम की॥२३॥

जो कोई ऊँचे मकान पर से गिर पड़ते हैं। अथवा वृक्षादि से चाहे बेहोश भी हो गया हो, चाहे अस्त्र और शस्त्रादि के द्वारा चाहे पशु इत्यादि के मारने आदि से जो घोर दुखी और सङ्कट में हैं कील कांटे आदि शरीर में घुस गये हों (विध गये हों) अंग कट गये हों, फट गये हों, खिस गये, पिस गये हों। ऐसे आर्तजनों के प्राणरक्षक*

---

* (क) मेरा एक मकान बन रहा था तपेसर नाम का थवई उस पर से गिर पड़ा, बेहोश होगया। शिर और अनेक अँग फूट गये जिनसे रुधिरधारा बहती थी, इस पर यही प्रयोग किया गया। तुरन्त फायदा पहुंचा ५ दिन में फिर यथा पूर्व काम करने लगा।

केवल यही औषध है, इसके समान भूमण्डल में और औषध नहीं देख पडता। २२॥

(ख) कितने लोगों के पैर के तलवा और अन्य अन्य स्थानों में अधिक भी कील और कांटे धँस गये थे और किसी २ का पदाग्र कुल्हाड़ी आदि से ऐसे कटे कि नाम मात्र ही को बाकी रह गये थे। ऐसी भीषण अवस्था में आदि से अन्त तक केवल इसी के प्रयोग से न तो पीड़ा हुई न जलन हुआ न पीव और मवाद आवे और शीघ्रता से आराम भी हुए (ग) मेरी निज की कथा है। ५ वर्ष की बात है भादों के महीने की आधी रात में मैं और मेरे छोटे भाई (पं० बागीश्वरी धर मिश्र) और मेरे दो मैनेजर (हरीनगर) स्टेशन जाने के लिये 'टमटम' पर बगहा रेलवे स्टेशन को जा रहे थे रास्ते में अरबी घोड़ा भड़का सड़क छोड़ कर बाईं ओर भागा और टमटम सहित ढाई हाथ पानी भरे खाते में उलट कर गिर गया। और सभी सवार तो भाग्य बश बच गये-अलग खड़े हुए पर मेरे पीछे टमटम का पिछला भाग खड़ा है। दाहिनी ओर टमटम का दाहिना भाग पश्चिम ओर (आगे) से घोड़ा गिर कर व्याकुल हो लात चला रहा है-कुछ चोट तो टमटम में लगती थी और बाकी मुझे बाईं ओर से मुझे भागने की कोई राह न थी उसी खाते से उठी मट्टी की दीवार थी, लोग कहते हैं कि "घोड़े की लात घोड़ा ही सहता है" पर मैं आदमी सह रहा था। अस्तु, आयु अवशिष्ट था, ईश्वर ने पीछे एक राह बतला दी, एक बृक्ष की डाल ऊपर से लटकी हुई देखी, उसे पकड़ कर ऊपर चढ़ गया-यद्यपि कष्ट बहुत था, हाथ और पैर की कई एक अंगुलियों के नह उखड़ कर गिर गये थे, कई स्थानों में भयंकर चोट लगी थी कहीं मोच लगी कहीं पिस गया, कहीं घिस गया। स्टेशन पर पहुंच कर रेल से हरीनगर गया, जो वहां से करीब २२ मील के था। यहां इसी गूलर के पत्तों का लेप का प्रयोग किया, सो भी ३॥ घण्टे चोट लगने के बाद (इसके पहले सजल कपड़े की बराबर पट्टी बांधी थी)।

इस का फल यह हुआ कि मुझे न कुछ कष्ट हुआ न देह में पीड़ा हुई, न घाव पका काम बराबर लिखने पढ़ने का भी करता

रहा। यद्यपि दाहिने ही हाथ की हथेलियों और अंगुलियों पर ही बहुत चोट आई थी।

डेढ़ दो सप्ताह में मैं सम्पूर्ण आरोग्य हो गया और समय पर नया नह भी जम गया।

इस में एक बात बहुत विचित्र देखी गई। दाहिने पैर के अंगूठे के नह से डेढ़ दो अंगुल और पीछे एक स्थान पर कटा नहीं था परन्तु मांस (रुधिर) भीतर ही भीतर पिस गये थे। इस के पक जाने का मुझे पूरा निश्चय था।

परन्तु यह पका नहीं, महीनों में विकृत लोहू जिस प्रकार नह क्रमशः आगे को बढ़ता जाता है और शरीर से उसके कुछ २ अंश बाहर होते जाते हैं, उसी प्रकार नया लोहू आदि के बढ़ने से नीचे के काले वर्ण वाले आगे निकल गये और नह में यद्यपि चोट नहीं लगी थी तथापि वह भी उसी जमे हुए पदार्थ के साथ साथ बाहर निकल गया।

एक प्रतिष्ठित मेरे आत्मीय को भगन्दर के स्थान में छिल २ जाता था और जब आयुर्वेदीय औषधों से लाभ न पहुँचा तो मोतिहारी के सर्कारी असिस्टेन्ट सर्जन ने कोकेन मिला हुआ एक लेप (मरहम) बना दिया इससे कुछ दिनों के लिए आराम होकर ज्यों का त्यों हो गया। दो चार वर्षों तक यही अवस्था थी—कि कोकेन लेप से आराम होता था, कि फिर हो जाता था। इसके बाद कलकत्ते (या भारत) में विख्यात नाम गुण यशा महामहोपाध्याय कविराज गणनाथ सेन सरस्वती एम. ए. एल. एम. एस महोदय जी को दिखाया। आप के औषध से भी उपकार हुआ, परन्तु फिर पीछे बीमारी ज्यों की त्यों हो गई। पीछे बेतिया राज के उस किंगएडवर्ड मेमोरियल अस्पताल में गया, जिसके समान बिहार और उड़ीसा में कोई अस्पताल नहीं है न तो सभी समझदारों की समझ में उसके डाक्टर राय बहादुर त्रिपुरा चरण गुहा के समान कोई उपकारक डाक्टर ही है आप की भी चिकित्सा ३ वर्ष होती रही। पहले आराम हो फिर भी वही पुरानी बात, बीमारी अब बहुत बढ़ गई दवा सुनती ही नहीं। जीवन की आशा जाती रही।

"अन्त तो गत्वा इस मरणोन्मुख" सुजन रोगी को इसी गूलर ने सप्ताह के भीतर ही आराम कर दिया।

"घिनही"—मेरे प्रधान मैनेजर चण्डी चरण शुक्ल के दाहिने हाथ के अंगुलो में घिनही हो गई। असावधानता से (बाहर रहने के कारण) उचित चिकित्सा न हो सको। अंगुलो फूल कर ढाई गुनी मोटी हो गई, पक गई, दर्द करने लगो, घोर पोड़ा होने लगो।

बगहा अस्पताल के डाक्टर ने अँगुली चोर कर मवाद आदि निकाल कर भीतर घाव में औषधों से भरी कपड़े को ग्रन्थि भर पट्टी दे दुरुस्त तो कर दिया पर

"दैव कुरै दूना दुक्ख"

की जो आज तक लोकोक्ति ही है, आज देख पड़ी, मैं घर में पूजा करता था, सुना कि चण्डी चरण बहुत दुख में हैं उन्हें अपने सामने बुलाया।

अब अवस्था यह थी कि व्रण तो एक अंगुलो में था परन्तु बगल को दूसरी अंगुलो में भी और मणिबन्ध में भी बिच्छी मारने के समान पीड़ा हो रही थी और इस पीडा को शान्ति के लिये कपड़े से खूब बन्हवाया था और इसके पहले गर्मी शान्ति करने के लिये दौड़ रहे थे। केवल ऐसी ही विचल विक्षिप्त दशा न थी बल्कि मेरे सामने आते ही धरती पर बिकल और विवश लेट गये हाथ और पैरों में आक्षेप और पेट में ऐंठन आने लगो इस अवस्था में इसी गूलर के पत्तों ने पांच ही मिन्टों में सब उपसर्गों के सहित पीड़ा को शान्ति कर दिया, रोगी हँसने लगा, दूसरे दिन घाव में से डाक्टरी दवा को ग्रन्थि आदि निकाल कर अपने ही यहां धुलाया, केवल एक अंगुल गहरा घाव था। इस में यही गूलर को पिसी हुई पत्तियां भरी गई दूसरे दिन अचरज से देखा गया कि समूचा घाव ही भर गया—भीतर दवा भरने का स्थान ही नहीं एक सप्ताह के भीतर घाव पूरा आराम हो गया। ×

शस्त्रेण दुष्ट व्रण पाटनेपि
दुष्टे न शुद्ध व्रण पाटनेपि ।
रोगाणवोऽपि सहसा क्षतेऽस्मिन्
संक्रामका घोरतरा विशन्ति ॥२४॥

ते यातना पूतिभुवस् सदाह
रति प्रदा रोगिण प्राश्वंवश्यम् ।
विनाशयति प्रसभं प्रवृद्धा
तत्प्राण रक्षा कर एष सारः ॥ २५ ॥

जिह्वाक्षते तालुनि शौषिरेच
यद्रोगिणो नाशि कयालप न्ति ।
उदुम्बर स्यात्र फलं विचित्रम्
निरन्तर त्वच्छद चर्वणेन ॥२६॥

कभी चीरते घाव के बढ़ जाता है कष्ट ।
तुरत भयङ्कर प्राण को करता है जो नष्ट * ॥ २४ ॥
इससे रोगी का यही तुरत बचाता प्राण ।
तड़प तड़प जो रो रहा करता उसका त्राण ॥ २५ ॥

शस्त्र (हथियार) से खराब व्रण (घाव) के काटनेपर और खराब शस्त्रों से (जिसमें लिम्फ लगा है) अच्छा घाव काटने पर उस कटे घाव में शीघ्रता से जो भयंकर विषैले रोगाणु पैदा हो जाते हैं वे (रोगाणु) जबरदस्ती बढ़ कर भयंकर यातना, और पीव, दाह बेचैनी, करके रोगी की शीघ्र और अवश्य नाश कर देते हैं ॥

ऐसे रोगी को प्राण बचाने वाला यही (गूलर का सार है) ।२४।२५

---

* बिन्देश्वरी प्रसाद जी डाक्टर सुरेशचन्द्र ।
हाय गये सुरधाम ये पड़े यही दुख फन्द ॥
पर इससे चण्डी चरण तुरत हुए आराम ।
सुखी किया जिसने जगत कर सज्जनता काम ॥

अनेक कारणों से जीभ के कट जाने पर और घाव के कारण तालू में छेद भी हो जाने पर कि जिससे रोगी नाक ही से (सानुनासिक) बोलते हैं इस (गूलर) के पत्ते बराबर चबाते रहने (रस भी चूसने) से बहुत शीघ्र (एक मास के भीतर) सदा के लिये आराम हो जाता है ॥ २६ ॥

और सार के प्रयोग से और जल्द आराम होते हैं (कपड़े की पोटली में सार रख कर जीभ के सहारे घाव पर रखना चाहिये)

चक्षुष्याभिष्यन्द निपीडितेपि,
दण्डादिभिर्वानिहतेसशल्ये।
औदुम्बर पत्र रसोऽपि हन्ति
शोथव्यथा व्याकुलता व्रणादीन् ॥२७॥

कर्णस्रावे वातथा वेदनायाम्
पीडायाम्वादन्त वक्षोद्भवायाम्।
घाधायाम्वा सन्ततम् नेत्रजायाम्
घ्राण वातातुण्डपाकादि जायाम् ॥२८॥

कफादि निरुद्धौ यस्य कण्ठादिषुरुजा भवेत्।
श्वासावरोधिका चापि सोपि दुःखी शुखीभवतः ॥२९॥

पीड़ित कान की पीड़ा से हो यदि, पीड़ित आंख की पीड़ा से होवै।
नाक के घाव से होवै दुखी यदि, दांत के दर्द से तो मत रोवै॥
जीभ कटी हो फटी हो सड़ा मुँह, तालू भी फूटा तो सार से धोवै।
फूला गला हो जो सांस रुकी हो तो, सार लगा सुख नींद से सोवै॥
२६-२७-२८-२९

आंखों में यदि असह्य पीड़ा हो, आखें उठी हों, अथवा दण्डादि के आघात से आंख में चोट आई हो, आखों में अधिक पीड़ा हो, लाली भी आगई हो, फूल भी गई हो रोगी अत्यन्त बे चैन हो।

यह गूलर के पत्र रस (कपड़े से छान कर) आंखों में देने से या सार को जल में घोल कर व्यवहार करने से शीघ्र ही पीड़ा व्याकुलता शोथ व्रण आदि आराम होते हैं ॥ २७ ॥

जिनके कान में व्रण हों, बहते हो कान में पीड़ा हो अथवा जिसके दांतो (मसूढ़ों) में दर्द हो अथवा आंखों में दर्द या घाव हो। अथवा जिसका मुंह पका हो भयंकर निनाव हुआ हो उसका यह प्राण रक्षक है (२८)

जिसके थूकने में या कफादिक के निकलने में या खांसने में पीड़ा होती हो इसके पत्ते चबाने से और चान्द्ररस के सेवन से रोगी सद्यः सुखी होता है ॥ २९ ॥

दहन दहन जाताः प्राय शोऽनेक रूपाः
सपदि विधि नियुक्तो दाह स्फोट मूर्छाः
परि हरति यथायं चान्द्रसारो नराणाम्
अधि धराणि तथान्यो नौषधो द्भुतसारः ॥३०॥

---

* १६ सितम्बर १९२१ के कलकत्ता समाचार (हिन्दी दैनिक पत्र) के सम्पादक की लेख का सारांश नीचे दिया हुआ पढ़िये।

आप के सर्व श्रेष्ठ आविष्कार उदुम्बर सार के एक गुण की परीक्षा का अनायास ही कलकत्ते में प्रसंग उपस्थित हो गया। स्थानीय एक प्रसिद्ध डाक्टर के घर में एक जन की आंख में सख्त चोट लगी डाक्टरी इलाज शुरु हुआ। प्रायः सभी नामी नामी डाक्टर बुलाये गये, किन्तु नेत्र में दर्द जलन शोथ, लाली और बेचैनी बढ़ती ही गई कोकेन जल के बराबर देते रहने पर भी कोई फल नहीं हुआ। ३ दिन बीत जाने पर वैद्य राज जी के नवाविष्कृत उदुम्बर पत्र सार का प्रयोग किया गया जिससे तुरन्त आंख की पीडा जलन और बेचैनी शान्त हो गई इसके साक्षी स्थानीय डाक्टर मैत्र डाक्टर कार्तिक चन्द्र वसु महामहोपाध्याय कविराज श्री गणनाथ सेन सरस्वती एम. ए. एल एम. एस और कविराज श्री यामिनी भूषण राय एम. ए. हैं।

दहन दहन जाताः दाह विस्फोट मूर्छा:*
सकल विकल भाव प्रायशो नेकरूपाः
परिहरति यथार्थं यातना श्चान्द्र सारः
इस अमृत मपि तथा स्याद असंदेहएव ॥ ३१ ॥

लेप करते ही तुरत गायब दरद औ दाह है।
इस लिये इस सार पर सबकी अमृत सी चाह है॥
एक पल में दाह बेचैनी बिकलता बन्द कर।
मोद ला देता है सुख को तुरत ही आनन्द कर॥

आग से जलने से जो दाह, पीड़ा, फोड़े, मूर्च्छा, आदि होते हैं उस हालत में तुरन्त भली भांति लगाया गया यह सार मनुष्यों के उन पीड़ावों को जैसा दूर करता है ऐसी दवा इस संसार में नहीं कोई मिल सकती ॥ ३० ॥

आग से जलने से अनेक तरह के जो दाह, पीड़ा, फोड़े, बेचैनी, आदि होते हैं इस प्रकार सब तरह की बिकलता में जैसा यह (सार) पीड़ाओं को दूर करता है ऐसा अमृत भी दूर करता है इसमें सन्देह ही है क्यों कि कहीं प्रत्यक्ष देखा नहीं गया है ॥३०॥

(यदि कहीं) आग से जल जाय तो इस अग्नि दाह से जो जलन होती है, और झलके (सजल स्फोट) पड़ जाते हैं और मूर्छा भी होती है। विकलता की सीमा नहीं रहती और अनेक प्रकार के उपसर्ग उपस्थित हो जाते हैं।

---

* ऊपर के श्लोक भूल जाने पर दूसरा लिखा गया जो प्रायः ऊपर होता है। आत्मीयों के उपदेश से यह भी रहने देते हैं।

बिगत श्रावण १९७९ को मैं मोतिहारी (चम्पारन) बिहार और उड़ीसा के गवर्नर ह्वीलर साहब महोदय के दर्बार में निमन्त्रित हो कर गया। मेरे साथ पं० श्री कान्त कृष्ण त्रिपाठी काव्य व्याकरण तीर्थ रत्नमाला आयुर्वेदीय श्रीचन्द्रोदय महा विद्यालय के आयुर्वेदाध्यापक भी थे। १० बजे दिन को मैं पूजा कर रहा था, और पास ही

ऐसी अवस्था में जिस प्रकार यह चान्द्ररससार भयङ्कर पीड़ादि का अपहरण कर सुखो करता है। ऐसा अमृत भो सुखी कर सकता

आप रसोई (भोजन) तैयार कर रहे थे। आप सडसे से पांच सेर के लग भग दाल से भरी खौलती हुई देगची चूल्हे से उतार रहे थे कि देगची उलट गई दाल के सहित सारा खौलता हुआ जल आप के दोनों पैरों पर गिर पड़ा फिर तो आप बेहोश हो गिरने लगे मेरे पास पूजा के अर्थ घी रक्खा था। तुरन्त लगाया गया परवे रहूँ विकलता बढ़ने लगी। पूजा ही पर मेरा ओफिस बक्स भी इत्तिफाक़न मौजूद था मैं उसमें 'उदुम्बरसार' की डिब्बी ढूढने लगा। संयोग बश एक डिब्बो मिली भी तो उस में एक चने के बराबर ही सूखा उदुम्बर सार निकला निराशा के साथ ही मैंने चन्दन रगड़ने के होरसे (पत्थर के टुकड़े) पर उसे रख जल दे कर चन्दन काष्ठ से रगड़ खूब महीन कर पैरों पर लगवाया।

आश्चर्य्य के साथ देखा कि आप प्रसन्न हैं— मैंने पूछा कि क्या हाल है ? आप ने कहा कि ।।।) बारह आना जलन शान्त हो गई—और अब मैं ठीक होस में हूं—

फिर शाम तक प्राय: थोड़ी कसर रह गई दूसरे दिन आप पूरे आराम हो गये सारे शहर की पैदल परिक्रमा की।

तीसरे दिन आप को मैंने एक कार्य्य बश बेतिया भेजा। वहां आपने २४ घन्टे दवा न लगाई और पूरा पैदल यात्रा भी की जिससे बायां पैर तो ठीक रहा पर दहिने में एक झलका (फोड़ा) निकल आया बढ़ने लगा और आप बेतिया से २ कोस दूर एक स्थान में चले गये। वहां जलने और फोड़े को भिन्न २ प्रकार की अनेक प्रचलित चिकित्सा हुई। किन्तु ब्रण की दशा शोचनी यही होती चली बहुत फूल गया। और पीड़ा होने लगी, पीव भर गया।

अनन्तः फिर उदुम्बर सार ही का शरण लेना पड़ा। और पांच ही सात दिन में सारा घाव आराम होगया।

घाव आराम होने के पहिले भीतर से जो लालरंग का मांस ऊपर आता है। वह सफेद रंग का था। जिससे यह निश्चित

है इसमें सन्देह ही है । (कारण न अमृत कहीं देखा गया न उसका गुण ही देख पड़ा ॥ ३१ ॥

दृष्टा भवेच्च सुलभाच्च हरेच्च बाधां
सद्यो महौषधगुणै रमितैरसाध्याम्
रोगाग्निजादि जनिता न्तदुदुम्बरेण
सारेण काचिदुपमा भविता सुधाया ॥३२॥

दहनजे दहने हत रोगिणि
परिजने परितः परि रोदिति
अमृत बद्धितर त्यथ जीवितं
सपदि सार उदुम्बर पत्रजः ॥३३॥

होता था । कि अग्निदग्ध में जिस प्रकार सफेद दाग (चरकसा) पड़ जाता है । इसमें भी होगा ।

परन्तु ऐसा नहीं हो सका । व्रण का दाग कालाही रहा ।

द्वितीया कथा ।

मेरा दूसरा पुत्र चन्द्रधर जो (१४॥ वर्ष का लड़का है) यद्यपि संस्कृत में कुछ योग्यता और अङ्गरेज़ी हिन्दी का मिडल पास है । पर बाल चन्चलता वश—ताजिया (दाहा) के उत्सव में इसी भाद्र पद में ।

छुछुन्दर नाम की आतशबाजी के उड़ाने में गलती की सारी हथेली बेतहे बारूद आदि से झुलस गई । भयङ्कर वेदना हुई । पर जैसा ऊपर श्री कान्त शर्म्मा [illegible] हुआ उससे यह झुलसा भी अधिक था। पीड़ा भी अधिक हुई। पर आराम बहुतही शीघ्र हुआ ।

इन दोनों अग्निदग्ध के रोगियों के प्राण केवल इसी औषध के बल से बचे ।

उर्वादि शूलेऽपिच रक्त जाते
ऽप्रति क्रियेचान्य चिकित्सितेभ्य:
सार प्रलेप: क्वचिदस्य तूर्णम्
प्राण प्रदाता ऽस्ति निपीडितानाम् ॥३४॥

हो जब बाधा तुरन्त सुधा मिले ऐसी मिले बिधि जो सुबिधा की।
पीड़ा तुरंत ही दूर करे, बदनामी न हो कहीं ला भमुश की ॥
सार से तो उपमा हो सुधा से जो की बड़ी सेवा सदा बसुधा की।
देख पड़े बसुधा में सुधा जब धार बहे बसुधा में सुधा की ॥ ३२ ॥

आग में जलने से रोगी, तड़प कर जोरो रहा।
इस दवा से तुरत ही आराम हो वह सो रहा ॥
लेप करते ही तुरत गायब दरद औ दाह है।
इसलिये इस 'सार' पर सब की अमृतसी चाह है।
एक पल में दाह बेचैनी बिकलता बन्द कर।
नींद ला देता है सुखकी तुर्त ही आनन्द कर ॥ ३३ ॥

होती कभी है जांघ में, पीड़ा भयंकर शूल की।
फिर बांह आदिक में बढी है, चोट जैसी शूल की।
जिसमें चिकित्सा ने बिषम, गद शान्ति को प्रति कूलकी।
ऐसी निराशा में इसीने, रोग-गति निर्मूल की ॥ ३४ ॥

यदि सुधा [अमृत] देखी जाय और मिलने में भी सुलभ हो। रोगाणु आदि से उत्पन्न हुई, अनेक महौषधियों के गुणों से, असाध्य [नहीं अच्छी होने वाली] पीड़ा को तुरन्त दूर करे तो इस सार से उस (अमृत) की कोई उपमा (तुलना) हो सकती है ॥३२॥

आग से जलने पर जलन से जो रोगी मर रहा हो और उसके परिजन (परिवार) के लोग रोरहे हों इस हालत में यह (गूलर के पत्ते का सार) अमृत के समान शीघ्र प्राण बचाता है ॥३३ ॥

रोगाणु बिशेण के कारण या रक्त बिकृति से जंघा, आदि में जो एक प्रकार की भयंकर शूल उत्पन्न होता है जिसमें प्रायः

सब चिकित्सा व्यर्थ होजाती है "उदुम्बर कल्क" प्रलेप अथवा चान्द्ररस सार लेप पोड़ितों का प्राण प्रदाता है ॥ ३४ ॥

कुछ दिन हुये कि भादो के महीने में मेरी दाहिनी जांघ में रह २ कर ऐसी पीड़ा होती थी कि जैसे कोई बर्छी से छेद देता हो। मैं मोतीहारी में था। शीघ्रता से घर पहुंचा। न तो बातहर तैलों से कुछ उपकार पहुंचता, और न दाबने और सेकने से कुछ लाभ हुआ और न बिजली की शक्तिदौड़ाने से ही कुछ आराम मिला बल्कि इस प्रतिकारों से कुछ २ पीड़ा बढ़ती ही जाती थी दिन दोपहर को मैं घर आया ११, १२ बजे रात को यह असह्य पोड़ा ऐसी बढ़ी कि अनुमान होगया कि अब मनुष्य लीलासम्बरण समय समीप है।

फिर उसी समय यह ख्याल आया कि आयुर्वेद का यह उपदेश है कि जहां बातघ्न औषधि से लाभ न हो वहां दूषित रक्त समझ कर उसकी चिकित्सा करनी चाहिये। इसमें मेरा ख्याल गूलर के पत्तों के तरफ दौड़ा इसे मलवा कर लेप कर मैं सो गया दूसरे दिन दो घंटा दिन चढ़े मेरी नींद टूटी और प्राण बचा और फिर न दर्द ही हुआ न दुबारा दवाही लगाई।

ग्रन्थिं व्रणं पूयविहीनमुग्रं,
विजृम्भितं ग्रन्थिकसंनिपाते।
कश्चित्प्रशान्तिं न याति प्रसह्य,
प्रतिक्रियाशून्यमनल्पकल्पैः ॥३५॥

आवर्तिभिः क्रिमिकुलाकुलितैर्व्रणैश्च
ये रोगिणो मरणभीतिभृतोऽतिदीनाः।
सारेण ते सपदि शर्म यतोऽतिमात्रं
~~माशीर्व दति भिषजेऽति तराङ्कृतज्ञाः~~ ॥ ३६ ॥
ह्याशिषोऽर्दद् भिषजेऽतितराम्कृतज्ञाः ॥ ३६ ॥

विविध रीति से जो बिगड़, हुआ घाव नासूर।
अधिक घाव दुर्गंध मय, कीड़े हैं भर पूर ॥

दुर्गंध हो घाव सड़ा हुआ हो, कोड़े पड़े हों बिगड़ा हुआ हो।
आराम में देर नहीं लगाता, विचित्र ही शक्ति सदा दिखाता ॥

गिल्टी चाहे प्लेग की, सन्निपात के घाव।
चाहे किसी प्रकार से, बिगड़ा हुआ चकाव ॥
जहां जहां बारूद है, वहां आग का गर्व।
जहां घाव हो फिर वहां, गूलर गर्व अखर्व ॥३५ ३६ ॥

प्लेग में कई दिनों तक बढ़ती हुई भयंकर गिल्टी में (जिसमें पीब नहीं हुआ है) कहीं कहीं यह ऐसी उत्तमता और शीघ्रता से आराम करता है जहां सब चिकित्सकों की सब चिकित्सा व्यर्थ हो जाती है ॥ ३५ ॥ *

चकाव, और कीड़ों से भरे घावों से जो रोगी मृत्यु के डर से अतीव दुखीः हैं वे शीघ्रही इस "उदुम्बर सार" से सुखी हो कर अतीव उपकार मानते हुये वैद्य को आशिर्वाद देते हैं ॥ ३६ ॥

ग्रन्थौ तथा श्लीपद सम्भवेच,
ज्वरार्तिघोरारतिजृम्भितेऽपि ।
आरम्भ एवास्य कृतः प्रलेपः,
परीक्ष्य एषोऽतितराम्भिषग्भिः ॥३७॥

फील पाव की गिल्टी, में दोबार। अभी दिया है, पाया भी उपकार ॥
जंघा की जड़ मेथी, जर था जोर। था आरम्भ मिटी सब आपद् घोर ॥

---

* पटने में एक परम सज्जन विद्वान् ब्राह्मण के पुत्र का जनेऊ था। संयोग बश आपकी अनुज बधू तथा उसी पुत्र को प्लेग होगया। डाक्टरी आदि मत की दवा से ६,७ दिन तक न जर ही हटा न भयंकर गिलती हो शांति हुई। डाक्टर कहते थे कि गिल्टी भयंकर है यह आराम होजातीतो ज्वर आदि उपसर्ग भी शांति हो जाते। गिल्टी पट्ठे में थी। पंडित जी ने गूलर के पत्ते का लेप दिया तो गिल्टी हट कर कूल्हे के पास चली गई, दूसरे दिन लेप किया तो हट कर पेट की ओर चली गई, तीसरे दिन लेप किया तो एकदम गायब होगई, रोगी आराम हुये।

[उर्दू छन्द में सब के समझने के अर्थ]

पुनरुक्ति दृष्टान्त

गिल्टी में फील पांव के दोबार दिया ।
गूलर ने उसे जल्द ही आराम किया ॥
जिसमें बुखार दर्द बेचैनी, बढ़ी चली ।
आरम्भ ही था रोग का आफतस भी टली ॥ ३७ ॥

पीडकारंभतः कामं व्रणारोग्यावधि क्रमात्
सारप्रयोगादेवाशु व्याधितः सुखमश्नुते ॥३८॥

परिहरति तथा हयादिकानाम्,
रुजमधिकां क्षतसम्भवाम्पशूनाम् ।
अपरं गदविनिग्रहेण तेभ्यो,
वितरति शर्म्म यथानिशं नरेभ्यः ॥३९॥

फोड़े के आरम्भ से, जब तक होता अन्त ।
सभी दशा में सुखद यह, देता काम अनन्त ॥ ३८—३९

फोडे के आरम्भ से लेकर उसके आराम होने तक जितनी क्रियायें हैं वे सब "सार" के प्रयोग से होती हैं-और व्याधि से रोगी शीघ्र सुखी होता है ॥ ३८ ॥

यह जिस प्रकार मनुष्यों के अनेक रोगों के आराम करने से आनन्दित करता है-उसी प्रकार घोड़े बैल, आदि पशुवों के व्रण (घावों) इत्यादि को पीडा को हरता है ॥ ३९ ॥

फलञ्चतद्धज्जनतोषकारि,
विशेषतः कोमलमेववालम् ।
प्रवाहिकायामपि वा ग्रहण्याम्,
प्राण-प्रदंरोग निपीडितानाम् ॥४०॥

मुखेधृतं चर्वित मेतदुग्रान्,
शान्तिन्नयेद् यन्मुखपाक रोगान् ।
तद् भोजनेना ऽपि बलप्रदायि,
अन्ये गुणाः पत्र समाः फलानाम् ॥४१॥

फल में इसके फल अधिक, जगमें परम प्रसिद्ध ।
बहुधा बतिये नर्म ही, है सिद्धौ षध सिद्ध ॥ ४० ॥

अतीसार ग्रहणी बिकृति, प्रतीकार बिनि षिद्ध ॥
इसमें प्राण प्रदान का, यही महौषध सिद्ध ॥
शुक्र मेंह प्रदरादि में, यह देता है काम ।
फिर तर्कारी आदि में, यह करता है नाम ॥ ४१ ॥

इस के फल भी जनता का परम उपकारक हैं बिशेषतः कोमल (नर्म) बतिये । यह भयंकर अतीसार और ग्रहणी में तो रोगियों को केवल यही प्राणदाता है । इसप्रकार को लाभ दाई कोई भी चिकित्सा नहीं है । ४०

इसको उसिन कर भीतर के बीज निकाल कर दिन में दही या मट्ठा (तक्र) के साथ खाना चाहिये और रात में उबाले हुये पतले बकरी के दूध में । बकरी का दूध न मिल सके तो गाय के १ सेर दूध में पैसा भर अंबरा का चूर्ण छोड़ कर आग पर चढ़ा कर दूध को फार देना चाहिये । और आठ दस परत कपडे से उस फटे हुये दूध को धीरे २ ऐसा छान देना चाहिये कि सिर्फ पानी भर छन जाय उसी पानी को रोगी को बराबर पानी की जगह पर पिलाना चाहिये । इसके पीने से दूध के बराबर ही लाभ (बल) होगा । और दूध पीने से जो पेट में बुराई होती हैं (दस्त भी कम आते हैं) वह नहीं होगी ।

यदि अंबरा न मिल सके तो एक रत्ती फिटकिरी के चूर्ण वा नीबू के रस देकर दूध फारना चाहिये जब तक बिशेष लाभ और बल न हो जावै-रोगी के इसी नियम से रहना चाहिये ।

इसे मुख में रखकर चबाने से (इसका फल) भयंकर मुख पाक रोग को आराम करता है–और भोजन करने से बलप्रद है। तरकारी इसकी बड़ी उपकारी है–और गुण फलों के भी पत्ते के तुल्य ही हैं ॥ ४१ ॥

दुग्धन्तथो दुम्बरजं प्रसह्य,
क्षतादि पीडां हरति प्रकामम्
मात्राल्प कत्वात् स्थिर लेप भावात्,
पत्रादि तस्तत्फलमर्हणीयम् ॥४२॥

द्विविन्दु मानेन च मूत्र कृच्छ्र,
निहत्य तीसार मपि प्ररूढम् ।
मेहन्तथा दुर्बलतां च कामं,
सितासमेतम किलभाक्षितञ्च ।४३
प्रदीयते मूलसमुद्भवोऽपि,
मेहादिरोगे ऽस्यरसो ऽनुपाने
त्वगस्य तद्वत्प्रथितो निघण्टौ,
कश्चिज्जनाना मुपकार भूमि ॥४४॥

देता इसका दूध है, घाव आदि में काम।
तुरत चिपक करे घाव को, करता है आराम ॥ ४२ ॥

मूत्र कृच्छ्र बहु मूत्र में, देखें इसका काम।
और कुष्ट में देखिये, क्या करता है नाम ॥ ४३ ॥

(बरवा छन्द)

देते हैं छिलके भी, इसका काम।
है निघण्टु आदिक में, इसका नाम ॥ ४४ ॥

इसका दूध भी क्षत (घाव) आदि के लिये प्राय: वैसा ही उपकारी है जैसा पत्र प्रत्युत दूध जहां लगाइये वहां ही सट जाता है।

और मात्रा भी थोडी रहती है। इतने गुण पत्रादि से दूध में अधिक भी है। परन्तु इसके संपूर्ण गुण पूर्ण जांचे नहीं गये हैं और प्रचुरता से दूध का मिलाना भी दुर्घट है॥ ४२ ॥

इस गूलर का दूध दो बून्द खाने से मूत्र कृच्छ्, और कठिन अतीसार, तथा चीनी या मधु से खाने से प्रमेह, और दुर्बलता भी छूटता है ॥ ४३ ॥

इसके जड़ का रस भी प्रमेहादि हारी है अतः अन्यान्य औषधों के अनुपान में भी दिया जाता है। और इसकी छाल की भी उपकारिता आयुर्वेद ग्रन्थों में लिखी हुई है पर इसकी परीक्षा का अवसर मुझे नहीं मिला ॥ ४४ ॥

संसारे नहि परिनिश्चितं कदाचि
आघातादिभिरिह कातिवेदना स्यात् ।
तत्पीडाप्रशमनहेतुराशुसारः
तत्पेट्यामसृतवदेष रक्षणीयः ॥४५॥

आग से जलने का, कटने का ठिकाना है नहीं।
कौन आफ़त कब कहां से चली आवैगी कहीं ॥
इससे इसकी एक डिब्बी पास रखना चाहिये।
घोर संकट के समय में प्राण बचना चाहिये ॥ ४५ ॥

जोकि अपने हित के करते काम सब अनुकूल हैं।
पास 'सार' नहीं रहा तो सब भयंकर भूल है ॥

श्री रिति श्री

संसार में यह निश्चय नहीं है कि कब कैसी भयंकर पीड़ा चोट आदि से होगी। उस पीड़ा को शीघ्र शांति करने वाला यह सार है। इस लिये इसे अमृत के समान सब को अपनी पेटी (बकस) में रखना चाहिये ॥ ४५ ॥

भारत प्रकाश प्रेस गोरखपुर में मुद्रित